बेसे (फ्रान्स)
दिसम्बर २१, २००१

सन्देश संख्या ४५

धर्म क्या है?

नधर्म कदाचित् स्वाभाविक उत्प्रेरक ऊर्जा के कारण अस्तित्व के प्रत्येक स्तर (व्यष्टि, कुटुम्ब, समष्टि, राष्ट्रीय और अन्तराष्ट्रीय) पर बिना किसी घर्षणात्मक बल के सहज भाव से कार्य करने और जीवन जीने का एक मार्ग – एक कला है।

कला और कलाकृति एक समान नहीं हैं। कलाकृति किसी को दी जा सकती है, बेची या खरीदी जा सकती है, किन्तु कला का हस्तान्तरण संभव नहीं है क्योंकि यह कलाकार की अन्तः प्रेरणा है, कोई वस्तु नहीं। इसी प्रकार, धर्म भी एक अनुबोधात्मक और सर्जनात्मक प्रक्रिया है। अतः कलाकार की कला की भाँति इसे भी बाँटना संभव नहीं है, किन्तु धर्म की ऊपज को कलाकृति की भाँति बाँटा जा सकता है। धर्म की ऊपज हैं – अवधारणायें और निष्कष, मताग्रह और सिद्धान्त, अन्धविश्वास एवं मतान्धता, छद्म आदर्श एवम् अन्तराय (अवरोधन), पूर्व धारणायें एवं पूर्वाग्रह, आस्था एवं विखण्डन, अपराध एवम् अनुगमनीयता, छल एवं पाखण्ड, दावा और दर्प, वाग्जाल और जिहाद, उन्माद और हत्यायें, वाक्–कला एवं प्रतिरोध, कथा और कहानियाँ, मिथ्याभिमान और निहित स्वार्थ, कल्पना, मान्यता और आरोपण इत्यादि–इत्यादि। ये चीजें मस्तिष्क को प्रभावित करती हैं, अतः मन्दिरों, मस्जिदों, गिरिजाघरों और अन्य प्रार्थना भवनों के द्वारा मगजधुलाई के लिए प्रयोग में लायी जाती हैं।

धर्म स्वयं के द्वारा जीने के लिए एवं स्वयं के लिए है। इसे उन धर्मग्रन्थों और शिक्षणालयों में नहीं सीखा जाना चाहिए जो धर्मतन्त्रों और संगठनों के माध्यम से आतंकवाद और अन्धकार की ओर ले जाते हैं। धर्म को अपने अन्दर प्रवेश देने के लिए सर्वप्रथम अपने को खाली कर धर्म के प्रवेश के लिए जगह बनानी होगी। जब धर्म किसी अनुबन्धन का परिणाम हो, विभेदकारी चित्तवृत्ति का एक क्रम हो, पौरोहितिक कलाबाजी की एक उपज हो, तब यह आरम्भ से ही समस्त वैज्ञानिक समझ एवं प्रगति का विरोधी हो जाता है। तत्पश्चात् यह अपराधबोध से ग्रस्त होकर विज्ञान का सहारा लेकर अपनी समस्त बेवकूफियों की 'वैज्ञानिक व्याख्या' करता है। राजनीतिज्ञ और पुरोहित वर्ग यह सुनिश्चित करते हैं कि वैज्ञानिक अनुसंधानों का अस्सी प्रतिशत उपयोग ईश्वर और विभिन्न पंथों, जो मन, इसकी शरारत एवं विद्वेष की ऊपज हैं, के नाम पर युद्ध और विनाश के लिए हो। देवत्व सदैव आपके दरवाजे पर दस्तक देता है किन्तु आप (चित्तवृत्ति) उनके स्वागत के लिए उपलब्ध नहीं होते। चित्तवृत्ति तो सदैव भूत एवं भविष्य में उलझी रहती है, वह कभी भी वर्तमान में उपलब्ध नहीं रहती। धर्म देवत्व के अवतरण के लिए निमंत्रण है। लेकिन यह संभव नहीं हो पाता है क्योंकि आप (चित्तवृत्ति) सदैव अनुकरण में ही व्यस्त रहते हैं।

धर्म प्रार्थना नहीं है। प्रार्थना तो अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु ईश्वर को राजी एवं प्रेरित करने की प्रक्रिया है। जो मन अपनी मूर्खतापूर्ण इच्छाओं के अनुसार कार्य करने हेतु ईश्वर को निर्देशित करने का भ्रम पालता है, वह वास्तव में एक घटिया, क्षुद्र एवं तुच्छ मन है, धार्मिक चेतना नहीं। धर्म आपके अन्दर और बाहर के प्रत्येक वस्तु का ध्यानस्थ दर्शन है। धर्म तो 'जो है' उसके साक्षात् बोध की मंगलमय प्रज्ञा है न कि 'जो होना चाहिए' उसके सम्बन्ध में मानसिक अटकलबाजियों और निष्कर्षों की सनक एवं हनक में भटक जाना।

धर्म अनुभवों की ललक नहीं बल्कि शाश्वत सत् का दीप्त अस्तित्व है।

धर्म मन के अन्धकार को दूर करना (स्वाध्याय), मन की बेड़ियों से देह को मुक्त करने का सतत अभ्यास (तापस) और दिव्य का प्रत्यक्षबोध (ईश्वर प्रणिधान) है। यही यथार्थ क्रियायोग है–न कि क्रियायोग के नाम पर आध्यात्मिक मण्डी में उपलब्ध मनोरंजन एवम् उत्तेजना।

जय लाहिड़ी महाशय
।।मन के अन्धकार के महानतम मुक्तिदाता।।